पेरिस
अगस्त १८, २००७

सन्देश संख्या १२२

विज्ञान भैरव

इस विषय पर सन्देश हेतु जिसने अनुरोध किया था, वह क्रियावान होने का अभिनय तो करता है परन्तु उसने शायद क्रियायोग की समझदारी एवं अभ्यास की गहराई में गोता नहीं लगाया है । वह व्यक्ति या फिर इस कार्य हेतु उस व्यक्ति को राजी करने वाला व्यक्ति विभिन्न विख्यात ग्रन्थों के माध्यम से ''आध्यात्मिक ज्ञान की खोज'' द्वारा अपने अहंकार की तुष्टि एवं पुष्टि करता है।

यह ग्रन्थ ८वीं शताब्दी के कश्मीरी शैव पंथ से संबंधित है तथा यह कश्मीर के राजा जयपीड के शासनकाल में काफी लोकप्रिय था । इसमें ११२ धारणायें वर्णित हैं । इनका संग्रह शायद एक शताब्दी पूर्व किया गया था । ''धारणा'', ''धर्म'', ''धरती'' जैसे शब्दों का आशय है – वह जो हमें धारण करता है । हमलोगों को कौन धारण करता है? ''निर्मन'' अर्थात् जीवन और उसकी प्रज्ञा ही धारण करती है । मन तो विभेदकारी चित्तवृत्ति है और विखण्डनों से परिपूर्ण है । यह न जीवन रूपी अग्नि है और न ही इसमें यथार्थता की सजगता रूपी ज्वाला है । मन और उसके विचार मानसिक पंजीकरणों एवं सांस्कृतिक आरोपणों के जाल मात्र हैं । इस तरह मान्यताओं और आरोपणों, अनुमानों और कल्पनाओं, पूर्वाग्रहों और विरोधाभासों, विकृति और विभ्रान्ति, विश्वास पद्धति और धर्मान्धता, छवियों और विचारों, अभिधारणाओं और प्रक्षेपणों आदि से उत्पन्न पीड़ा का ही दूसरा नाम मन है । यह हमें धारण नहीं करता बल्कि हमारा नाश करता है । यह जीवन का शत्रु है । जीवन का परमानन्द और आशीर्वाद तभी सम्भव है जब मन का निर्मन में विलय हो जाय । और तभी मन और उसकी आपाधापी से मुक्ति होती है तथा वास्तविक समझदारी का उदय होता है । सभी ११२ ''धारणायें'' विभिन्न प्रकार से एक ही सन्देश देती हैं । यथा–'' ''निर्मन'' में विलय को प्राप्त हो; शून्यता ही पूर्णता और पवित्रता है; मन निर्मित कल्पनाओं, अवधारणाओं एवं विखण्डनों से मुक्त हो जाओ ।''

इस ग्रन्थ से आकस्मिक रूप से लिए गए कतिपय सूत्र यहाँ दिये जा रहे हैं । ये हम क्रियावानों द्वारा किए जा रहे क्रियायोग–अभ्यास की महत्ता को रेखांकित करते हैं ।

श्वास के बाहर आने
और पुनः भीतर लौट जाने के
मध्य तुम रिक्त होते हो ।
इस अन्तराल में ही तुम शून्य होते हो ।
यह शून्यता ही समस्त जीवन का उत्स है,
इसमें प्रवेश करो,
श्वास का आरोह जीवन को धारण करता है
और इसका अवरोह उसे शुद्ध करता है ।
श्वास निष्कासन के साथ हम
पुरानी हवा, पुराने विचार और पुरानी भावनाओं का भी रेचन करते हैं ।

क्रिया प्राणायाम दर्शन का यह सार है ।

तुम्हारा अवधान प्रवाहित हो
सुषुम्ना स्थित सजगता के केन्द्रों से होकर
श्रद्धा के साथ ।
शरीर के प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक गीत है,
चक्रों में गुंजित इन ध्वनियों को ध्यान से सुनो,
दीर्घ और लयबद्ध
एक–एक पर से ध्यान दो
मूलाधार पर, और समय आने पर
सहस्रार पर ।

यह द्वितीय चरण का सामन्त्रक है ।

पूरा ध्यान सुषुम्ना में स्थित कर
मेरुदण्ड के केन्द्र में सूक्ष्म स्पंदन पैदा करते हुए,
उस धारा को पृथ्वी और सूर्य के मध्य जोड़ते हुए,

चुम्बकत्व बन जाओ समस्त सृष्टि को जोड़ते हुए ।
यह प्रथम चरण की मानसिक प्राणायाम प्रक्रिया है ।
आँखों के ऊपर अँगुलियाँ रखकर,
ढककर, कानों को
नासाछिद्रों को और मुँह को,
छोड़ दो स्वयं को अपने अन्तराकाश में ।
इस तरह अपने अन्तर में धारित प्राणाधार ऊर्जा में प्रवेश करो ।
जैसे ही आवेश बनता है,
प्यारा किन्तु भयानक
अन्तर केन्द्रों में डूब जाओ ।
जैसे ही हल्के पदार्थों का प्रवाह बढ़ता है
भ्रू–मध्य के आकाश में उसका पीछा करो
जहाँ वह प्रकाश–मिलन के रूप में समाप्त हो जाता है ।
जब पलक गिरती है ।
सोचो, पलकें कितने हलके से आँखों को स्पर्श करती हैं ।
पलकों के ऊपर अँगुलियों को हलके से रखो
और देखने के इन दो अतिसंवेदनशील केन्द्रों के मध्य उस आकाश के प्रति सजग हो जाओ ।
वहीं एक आँख है जो परा जगत में देखती है ।
यह प्रथम चरण की योनि–मुद्रा और कूटस्थ में ऊँ का विस्फोट है।
आकाश की रिक्तता शरीर में व्याप्त हो जाती है
सभी दिशाओं से साथ–साथ ।
आकाश सदैव है, तुम्हारे ध्यान में आने से पहले से है ।
जिसे हम आकाश कहते हैं, वह शाश्वत है
और उसका आधार कठोरतम ग्रेनाइट से भी अधिक मजबूत है ।
आकाश दुनिया में रहने की अनुमति है
जिसके अन्दर ही अभिव्यक्ति और कार्य है ।
यह यथार्थ सजगता का आकाश है ।
यही ''निर्मन'' या ''धार्मिक मन'' है ।
सोचो कि विराट शून्यता व्याप्त हो रही है
तुम्हारे सिर के ऊपर, तुम्हारे मूलाधार के नीचे,
और साथ–साथ तुम्हारे हृदय के भीतर भी ।
यह द्वितीय चरण के ठोकर क्रिया की ''परावस्था'' है।
शरीर में फैले केन्द्रों के मध्य
ज्योतिर्मय सम्बन्धों पर ध्यान करो ।
मेरुदण्ड का आधार और सिर का शीर्ष
जननेन्द्रिय और हृदय
हृदय और कंठ
कंठ और ललाट
लालाट से सिर के शीर्ष तक
सम्बन्धों की धारा पर ध्यान दो
विद्युत प्रवाहित करने वाला,
सदैव स्पन्दित, अच्छी तरह जुड़ा हुआ,
प्रत्येक दो के मध्य और प्रत्येक दूसरे से युक्त
तब सबका सबके साथ की प्रतिध्वनि पर
साथ–साथ ध्यान करो ।
और विस्मय से उत्पन्न
ज्योतिपुंज में प्रवेश करो ।
और तुम्हारी हड्डियाँ भी प्रबोध को उपलब्ध हो जायेंगी ।

सूक्ष्म स्तर की क्रिया के तीसरे चरण में घटित होने वाली
यह अवस्था है ।

''बार–बार हो आवृत्ति
श्वासों के मध्यान्तराल के आनन्द हेतु ।
प्रत्येक आवृत्ति पर सीखो आनन्दित होना ।''

यह संकेत है कि जब हमलोग बहुत उच्च क्रिया के स्तर में चले जाते हैं तब भी क्रिया प्राणायाम नहीं छोड़ा जाना चाहिए ।

देखो कि अग्निशिखा सम्पूर्ण सृष्टि को निगल रही है ।
सभी चीजों को जब अग्निशिखा निगलती है
स्थिर रहो और विचलित मत हो ।
जैसे ही सृष्टि की सभी चीजों का प्रकाश में लय हो जाता है,
यह व्यक्तिनिष्ठ दुनिया अनन्त हो जाती है ।
दिव्यता (अनन्तता) को उपलब्ध होने के लिए
विभेदकारी–चित्तवृत्ति के प्रत्येक स्तर के द्वैत का लय हो जाता है ।
अगले ही क्षण उस शून्यता में विलीन हो जाओ ।
कुछ नहीं और सबकुछ हो जाओ ।
मन में विचारों का उदय तब नहीं होता,
वह अपने ही आधार में स्थित होता है,
यही है वह अनन्तता ।
प्रकट हो जाती है वास्तविकता ।
तुम्हारा अस्तित्व ही सजगता का क्षेत्र है ।

यह ''ईश्वर–प्रणिधान'' है ।

एक श्वास का दूसरे श्वास में समाहार करो;
बहिर्श्वास का अन्तःश्वास में और अन्तःश्वास का बहिर्श्वास में ।
विलय घटित होगा ।

यह क्रिया प्राणायाम का सार है ।

सर्वत्र व्याप्त आनन्द रूपी अमृत का पान करो
ज्योतिर्मय प्याले रूपी इस दिव्य शरीर से

यह शरीर में ध्यानशील गति है ।

अपनी जिह्वा को तालू पर रखो और
चूसने के भाव में चुपचाप वहाँ रहो ।

यह तालव्य क्रिया है ।

मुँह थोड़ा खुला रखो
जिह्वा का अग्रभाग प्रेमपूर्वक स्पर्श करता हुआ तालु को,
जो मस्तिष्क का आधार है ।
मन को मुख गुफा में विश्राम करने दो ।

यह खेचरी मुद्रा की ओर इंगित करता है ।

और भी कई सूत्र हैं जिनकी तांत्रिकों की आध्यात्मिक मण्डी में चालाकी से व्याख्या की जाती है ताकि उनकी मदद से कामवासना में लिप्त रहा जा सके। उनका यहाँ उल्लेख आवश्यक नहीं है । काम–ऊर्जा जीवन है किन्तु कामवासना में उसका पतन मन है जो जीवन से अलगाव है । सुख की काल्पनिक गतिविधियों में फँसना आनन्द की ऊर्जा में होना नहीं है । समझदारी और चैतन्य का प्रकाशन स्वतः हो जाता है जब चाहने–पाने का पूर्णरूपेण अन्त हो जाता है । स्वतंत्रता (जीवन) धारण करती है और इसलिए पवित्र है । विखण्डन (मन) विध्वंसकारी है और इसलिए नरक है ।

।। क्रियायोग के काश्मीरी अनुरक्षण की जय ।।